खण्ड–5, अंक–1, वर्ष–2017, मु0पृ0 174–177, D.O.I. : 10.22445/avsp.v5i01.9876 वैज्ञानिक लेख

गाँधी और कृष्ण का प्रकृति प्रेम

महेन्द्र प्रताप सिंह
उप वन संरक्षक, कार्यालय प्रमुख वन संरक्षक
17, राणा प्रताप मार्ग, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
mahendrapratapsingh1960@gmail.com

प्राप्त तिथि–30.06.2017, स्वीकृत तिथि–03.09.2017

सार– पर्यावरण प्रदूषण आज के युग की प्रमुख समस्या है। शासन, स्वयं सेवी संगठनों एवं अन्य संस्थाओं द्वारा पर्यावरण प्रदूषण को दूर करने की दिशा में अनवरत प्रयास किये जा रहे हैं किन्तु वे प्रभावी नहीं हो पा रहे हैं। अब सभी यह अनुभव कर रहे हैं कि जन सहभागिता के बिना पर्यावरण प्रदूषण से मुक्ति पाना सम्भव नहीं है। स्वामी विवेकानन्द ने कहा था कि किसी आन्दोलन से जन सामान्य को जोड़ने के लिए धर्म सबसे उपयुक्त माध्यम है। श्रीकृष्ण भारतीय जन मानस की आस्था के प्रतीक हैं एवं महात्मा गाँधी भारत के स्वतन्त्रता आन्दोलन के सूत्रधार हैं। इस लेख में इन मनीषियों के पर्यावरण संरक्षण के प्रति आन्तरिक लगाव को रेखांकित किया गया है। आधुनिक समाज के लिए इन मनीषियों के विचार प्रेरणा के स्रोत हैं।

बीज शब्द– गाँधी, कृष्ण, प्रकृति प्रेम, पर्यावरण संरक्षण।

Gandhi and Krishna-their love for nature

Mahendra Pratap Singh
Deputy Forest Conservator, Office of Principal Forest Conservator
17, Rana Pratap Marg, Lucknow-226001, U.P., India
mahendrapratapsingh1960@gmail.com

Abstract- Environmental pollution is the major problem of today's era. Various efforts are being made to reduce environmental pollution by the government, self-help organizations and other institutions but they are least effective. Now everyone is experiencing that it is not possible to get rid of environmental pollution without public participation. Swami Vivekananda had said that religion is the most suitable medium for connecting people with any movement. Shri Krishna is a symbol of the faith of the Indian people and Mahatma Gandhi is the founder of India's independence movement. In this article, the natural attachment to the environment protection of these mystics has been underlined. The views of these mystics for the modern society are the source of inspiration.

Key words- Gandhi, Krishna, natural attachment, environment protection.

1. **प्रस्तावना–** पर्यावरण प्रदूषण आज के युग की प्रमुख समस्या है। शासन, स्वयं सेवी संगठनों एवं अन्य संस्थाओं द्वारा पर्यावरण प्रदूषण को दूर करने की दिशा में अनवरत प्रयास किये जा रहे हैं किन्तु वे प्रभावी नहीं हो पा रहे हैं। अब सभी यह अनुभव कर रहे हैं कि जन सहभागिता के बिना पर्यावरण प्रदूषण से मुक्ति पाना सम्भव नहीं है। स्वामी विवेकानन्द ने कहा था कि किसी आन्दोलन से जन सामान्य को जोड़ने के लिए धर्म सबसे उपयुक्त माध्यम है। श्रीकृष्ण भारतीय जन मानस की आस्था के प्रतीक हैं एवं महात्मा गाँधी भारत के स्वतन्त्रता आन्दोलन के सूत्रधार हैं। पर्यावरण संरक्षण के प्रति इन दोनों मनीषियों का गहरा आन्तरिक लगाव था। आधुनिक समाज के लिए इन मनीषियों के विचार प्रेरणा के स्रोत हैं।

2. **कृष्ण और उनका प्रकृति प्रेम–** श्रीकृष्ण के समय में पर्यावरण शुद्ध था। श्रीकृष्ण स्वयं प्रकृति प्रेमी थे। प्रकृति की गोद में ही उन्होंने अनेक लीलाएं की। उनके जीवन के अनेक कृत्यों से प्रकृति प्रेम का सन्देश मिलता है। वृक्षों के प्रति श्रीकृष्ण के मन में अत्यन्त आदर भाव था। श्रीमद्भागवत पुराण के दशम स्कन्द में वर्णन आया है कि एक दिन श्रीकृष्ण अपने भाई बलराम और अन्य ग्वाल बालों के साथ गायें जुगाते वृन्दावन से दूर जा पहुँचे। तदुपरान्त–

निदाघार्कातपे तिग्मे छायाभिः स्वाभिरात्मनः। आतपत्रायितान् वीक्ष्य द्रुमानाह व्रजौकसः।।[1]

(श्रीमद्भागवत 10/22/30)

बड़ी तीक्ष्ण ग्रीष्म की धूप में अपनी छाया से संरक्षण करने वाले सघन वृक्षों को देखकर श्रीकृष्ण ने अपने मित्रों से कहा–

हे स्तोककृष्ण हे अंशो श्रीदामन् सुबलार्जुन। विशालार्षभ तेजस्विन् देवप्रस्थ वरूथप।।
पश्यतैतान् महाभागान् परार्थैकान्त जीवितान्। वात–वर्षा–तप–हिमान् सहन्तो वारयन्ति नः।।[1]

(श्रीमद्भागवत 10/22/31, 32)

हे स्तोक कृष्ण! हे अंशो! हे श्रीमन्! हे अर्जुन! हे विशाल! हे ऋषभ! हे तेजस्मिन! हे देवप्रस्थ! हे बहुरूप! इन बड़भागी वृक्षों को देखो, यह कितने भाग्यशाली हैं, ये सदा परोपकार के लिये एकान्तवास करते हैं। ये स्वयं पवन, वर्षा, शीत, ताप आदि के प्रहार सहकर हमारी इनसे रक्षा करते हैं।

अहो एषां वरं जन्म सर्व प्राण्युपजीवनम्। सुजनस्येव येषां वै विमुखा यान्ति नार्थिनः।।[1]

(श्रीमद्भागवत 10/22/33)

अहो! इन वृक्षों का जन्म धन्य है, इनसे सभी सुख पाते हैं, इनसे हमारे एवं अनेक प्राणियों की जीविका चलती है। जैसे किसी सत्पुरुष के पास से याचक निराश नहीं लौटता वैसे ही इन वृक्षों के समीप आकर कोई निराश नहीं लौटता।

पत्र पुष्पफलच्छाया मूलवल्कलदारुभिः। गन्ध निर्यास भस्मास्थि तोक्मैः कामान् वितन्वते।।[1]

(श्रीमद्भागवत 10/22/34)

इस संसार को ये वृक्ष पत्ते, फूल, फल, छाया, जड़, वल्कल, लकड़ी, सुगन्ध, गोंद, भस्म, कोयला आदि प्रदान कर सब प्राणियों की मनोकामना पूर्ण करते हैं।

एतावज्जन्म साफल्यं देहिनामिह देहिषु। प्राणैरथैर्धिया वाचा श्रेय एवाचरेत् सदा।।[1]

(श्रीमद्भागवत 10/22/35)

इस संसार में उन्हीं देहधारियों का जन्म सफल है, जो कि प्राण, धन, बुद्धि और वाणी से सदा पराये का भला किया करते हैं।

इस प्रकार स्वयं श्रीकृष्ण वृक्षों का उपकार मानते हुये अपने मित्रों से वृक्षों से प्रेरणा ग्रहण करने को कहते हैं। यह वर्णन वृक्षों के प्रति उनकी धारणा एवं वृक्षों से उनके प्रेम को रेखांकित करता है। गीता में तो 'अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां' का सन्देश देते हुये पीपल को अपना ही स्वरूप बताया है। पीपल(*Ficus krishnaii*) की एक प्रजाति का नाम आज भी कृष्ण पीपल है। श्रीकृष्ण के समय में वन समृद्ध थे, वन क्षेत्रों पर कोई खतरा नहीं था फिर भी वनों में आग की घटनायें होती रहती थीं। मुंजवन में एक बार लगी भयंकर आग से श्रीकृष्ण ने स्वयं ग्वाल बाल एवं गायों की रक्षा की थी। श्रीकृष्ण के काल में दीपावली के बाद इन्द्र पूजा होती थी। एक बार नन्द जी कुल सहित इन्द्र पूजा की व्यवस्था करा रहे थे। यह बात श्रीकृष्ण को रुचिकर नहीं लगी। उन्होंने इन्द्र पूजा के स्थान पर गोवर्धन पूजा करने का आग्रह करते हुये ब्रजवासियों से कहा–

''हमारे तो पुर, देश, नगर, ग्राम, घर कुछ भी नहीं है। हे तात! केवल वन ही हमारा घर है और सदा वन और पर्वतों में हमारा वास है। इसलिये गौ एवं विद्वान ब्राह्मण की सेवा करना उचित है, और पर्वतों का पूजन करना चाहिये जिससे हमारी गायों का और हमारा पोषण हो। चूँकि हमारे समीप के सब पर्वतों में गोवर्धन श्रेष्ठ है अतः उसी का यज्ञ करो। जो इन्द्र पूजन के लिये सामग्री इकट्ठा की गयी है, उसी से गोवर्धन पूजन करो।''[1](श्रीमद्भागवत 10/24/24, 25)

इस प्रकार गाय और गोवर्धन की पूजा के माध्यम से श्रीकृष्ण ब्रजवासियों को प्रकृति के सन्निकट लाने में समर्थ हुये। उनकी प्रेरणा से गाय और गोवर्धन की पूजा होने लगी जो आज भी जारी है। देवराज इन्द्र की पूजा के स्थान पर गोवर्धन पूजा एक श्रेष्ठ एवं साहसिक कार्य था जो कृष्ण जैसा जननायक ही कर सकता था। आज के सन्दर्भ में वन एवं पर्वतों की पूजा का अर्थ है उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते हुये संरक्षण प्रदान करना। इनके उपहार तो हमें स्वतः प्राप्त होते हैं, इन्हें उपभोग की वस्तु समझने के पाप से हमें बचना चाहिये। श्रीकृष्ण के समय में यमुना प्रदूषित थीं। ऐसी किवदंती है कि कालीनाग के विष से यह प्रदूषण था। जो भी जीव यमुना जल को पीता था वह समाप्त हो जाता था। यमुना की इस पीड़ा को दूरकर श्रीकृष्ण ने उसे प्रदूषणमुक्त किया। यह एक महान जनहितकारी कार्य था। आज जबकि हमारे देश की अधिकांश प्रमुख नदियां प्रदूषित हैं, श्रीकृष्ण के उक्त कृत्य से हम प्रेरणा ले सकते हैं।

श्रीकृष्ण द्वारा मोर पंखों का मुकुट सिर पर धारण किया गया। सोने या बहुमूल्य हीरे जवाहरात की अपेक्षा मोरपंख का चयन उनके प्रकृति प्रेम एवं संवेदनशीलता का द्योतक है। प्रकृति के सुरम्य अंचल में श्रीकृष्ण का बचपन बीता था। प्रकृति की गोद

में ही खेलकूद कर वे बड़े हुये थे। श्रीमद्भागवत् के दशम स्कन्द(अ0 12) में वन अंचल में श्रीकृष्ण की बाललीलाओं का मनोहारी चित्रण निम्नवत् किया गया है–

''सुन्दर वन की शोभा देखने के लिये जब श्रीकृष्ण दूर चले जाते तब सब बालक परस्पर होड़ कर दौड़ते थे और कहते थे कि पहले मैं छुऊँ, दूसरे कहते थे कि पहले मैं छुऊँ, इस प्रकार श्रीकृष्ण चन्द्र को छूते थे एवं वन अंचल में आनन्दित होकर खेलते थे। कोई बालक बांसुरी बजाते थे, कोई श्रृंगी का शब्द सुनाते थे, कोई–कोई बालक भौरों के संग गाते थे और कोई–कोई कोकिला की बोल से बोल मिलाते थे। कोई बालक आकाश में उड़ते पक्षियों के संग दौड़ते, कोई हंसों के संग धीरे–धीरे चलते, कोई बालक बगलों के पांति के पास चुपके–चुपके जा बैठते और कोई बालक प्रसन्न मन से मोरों के संग नाचते थे। कोई बालक बन्दरों की पूँछ पकड़–पकड़ कर खींचते थे, कोई पूँछ पकड़े ही पकड़े उनके संग कूदकर वृक्षों पर चढ़ जाते थे। कोई बालक अपने कान दबाकर आँखे फैलाकर बन्दरों के सम्मुख खड़े हो घुड़की बताते थे, कोई–कोई वृक्षों पर चढ़कर नीचे को कूदते थे। कोई–कोई बालक मेढ़कों के संग फुदकते थे और जब मेढक पानी में डुबकी लगाते थे तो वे भी पानी में डुबकी(गोता) लगाते थे। कोई बालक अपनी परछाईं पानी में देखकर उसकी हँसी करते थे तथा कोई बालक कुएँ बावड़ी में अपनी प्रतिध्वनि सुनकर क्रीड़ा करते थे।''[1](श्रीमद्भागवत 10/12/6,7,8,9,10)

प्रकृति की गोद में जिसने बालपन में ऐसी क्रीड़ाये की हों उसका प्रकृति प्रेम तो अनुकरणीय होगा ही। वृन्दावन में श्रीकृष्ण की लीलाएँ अन्तःकरण में वनों एवं वन्यजीवों के प्रति प्रेम का संचार करती हैं। वन्यजीव, पशु एवं पक्षियों से वे ऐसे घुलमिल गये थे मानों वे परिवार का अंग हों। सहज भाव से सबके बीच रहते हुये वातावरण में एक अदभुत उमंग का संचार होता था। छल–कपट से दूर ऐसे स्थान पर मात्र प्रेम ही प्रेम था। एक ऐसा ही चित्रण श्रीमद्भागवत् के दशम स्कन्ध(अध्याय 15) में आया है जो निम्नवत् है–

''अद्भुत वृन्दावन की शोभा देख प्रसन्न मन श्रीकृष्ण चन्द्र पर्वत के समीप यमुना नदी के तीर पर गायों को चराते ग्वालबालों के संग विहार किया करते थे। मदोन्मत्त भौंरे जिस समय गुंजार करते थे श्रीकृष्ण और बलराम भी उनके स्वर में स्वर मिलाकर गाते थे। वनमाल पहिरे बलदेव जी के साथ ग्वालबाल भी उत्तम चरित्र गाते थे। कभी राजहंसों की मधुरवाणी सुन उनके संग वैसी ही मधुरवाणी बोलते थे, कभी अपने साथी मित्रों को हँसाने के लिये मोरों को नाचता देखकर उनके सम्मुख आप भी जामा फैलाये नाचते थे। कभी जो कोई गाय चरती–चरती दूर निकल जाये तो मेघ के समान गम्भीर शब्द से प्रसन्न हो उनके नाम ले लेकर बुलाते थे। कभी चकयी, चकोर, क्रौंच, चकवा, भारद्वाज, चातक, कीर, कपोत, सारिका और मोर के शब्द सुनकर आप भी उसी प्रकार का शब्द उच्चारण करते थे। कभी व्याघ्र, सिंह को देखकर जैसे डरकर और पशु भागते वैसे ही गायों को देख भयभीत हो आप भी भागते। किसी समय खेलते–खेलते जब बलदेव जी को परिश्रम हो जाता तब किसी मित्र की गोदी में सिर रखकर उसकी जंघा का तकिया बनाकर सो जाते, तब श्रीकृष्ण उनके चरण दबाकर पंखा करके थकान दूर करते थे। किसी समय कृष्ण बलदेव अद्भुत नृत्य करते, गाते, उछलते, कूदते, लड़ते–भिड़ते और ग्वालबालों की भुजा पकड़कर हंसकर कृष्ण बलदेव दोनों भाई कहते देखो कैसा नाचा, कैसा गाना गाया इस प्रकार अपनी–अपनी बड़ाई करते। किसी समय जब मल्लयुद्ध करते–करते हार जाते तब श्रीकृष्ण वृक्ष की जड़ के सहारे, पत्तों की शय्या पर, गोपों की गोदी का तकिया बनाकर सो जाते थे। कोई ग्वालबाल महात्मा श्रीकृष्ण के चरण दाबते, कोई पापहरित ग्वालबाल पत्तों के और पुष्पों के पंखे बनाकर श्याम सुन्दर को बयार करते थे। कोई ग्वाल स्नेहभरी बुद्धि से श्रीकृष्ण चन्द्र की नींद किसी प्रकार उचट न जाये इसलिये मनोहर मलारों के पद सहज–सहज में गाते थे।''[1](श्रीमद्भागवत 10/15/10–18)

ऐसे अद्भुत दृश्य की कल्पना मात्र से हृदय रोमांचित हो उठता है तथा एक अलौकिक आनन्द की अनुभूति होती है।

3. **गाँधी और उनका प्रकृति प्रेम–** महात्मा गाँधी के समय में भी पर्यावरण प्रदूषण की समस्या नहीं थी। पर्यावरण शुद्ध था। गाँधी जी का जीवन स्वतन्त्रता संग्राम एवं सामाजिक सुधारों हेतु पूर्णतः समर्पित था। उन्हें समाज के बीच रहकर ही समाज की सेवा करनी थी। उन्हें वन क्षेत्रों में निवास का अवसर नहीं मिला किन्तु गाँधी जी को पेड़–पौधों एवं वन्य जन्तुओं के प्रति असीम अनुराग था। उनका मानना था कि भारत गाँवों में बसता है। भारत की सम्पन्नता, गाँवों की सम्पन्नता पर निर्भर करती है। गाँवों की सम्पन्नता के सम्बन्ध में उन्होंने अपने विचारों को निम्नवत् अभिव्यक्ति दी है– ''आदर्श ग्राम वह है जिसमें प्रतिदिन की आवश्यकताओं वाली सामग्री अर्थात् छप्पर, बाँस, ईंधन एवं चारण क्षेत्र गाँव की 5 मील की परिधि के अन्दर प्राप्त हो सके।'' इस प्रकार गाँधी जी द्वारा गाँव को एक आत्मनिर्भर इकाई बनाने की परिकल्पना की गयी थी। कहने की आवश्यकता नहीं कि ऐसा तभी सम्भव है जब गाँव हरे–भरे हों।

महात्मा गाँधी वनस्पतियों, पशुओं एवं वन्य जन्तुओं पर अत्याचारों के प्रबल विरोधी थे। उनके विचारों के अनुसार वनस्पतियों, पशुओं एवं वन्य जन्तुओं का संरक्षण प्रत्येक दशा में किया जाना चाहिये। वनस्पतियों, पशुओं एवं वन्य जन्तुओं का ध्यान न देने वालों को वे मनुष्य मानने को भी तैयार नहीं थे। इस सम्बन्ध में उनके विचार निम्नवत् हैं– ''पौरुष का सार यह है कि पशु जगत और वनस्पति जगत के सभी प्राणियों का ज्यादा से ज्यादा ख्याल रखा जाये। जो अपने सुख की खोज में दूसरों

का ख्याल नहीं रखता वह जरूर इन्सान से कुछ घटिया है। वह विचारहीन है।'' आज मानव समाज द्वारा अपने सुख–समृद्धि की पूर्ति हेतु प्रकृति का असीमित विदोहन किया जा रहा है। वृक्षों एवं वन्य जन्तुओं पर हम घोर अपराध कर रहे हैं। इसके कुपरिणाम भी सामने आने लगे हैं। ऐसे में गाँधी जी का विचार उस संजीवनी की तरह हो सकता है जिसके अनुपालन से मूर्छित प्रकृति फिर से चैतन्य हो सके।

पशुओं की हत्या के, चाहे वे वन्य पशु हों या पालतू, गाँधी जी प्रबल विरोधी थे। उनके अनुसार जीवों को बचाने एवं उन्हें सुरक्षित रखने का उत्तरदायित्व मानव समाज का है। स्वयं उन्हीं के शब्दों में– ''आमतौर पर जानवरों को मारने का और उन्हें बचाने का कर्तव्य निर्विवाद सत्य माना जाना चाहिये।'' वैसे भी जिसे हम बना नहीं सकते उसे नष्ट करने का हमें अधिकार नहीं हो सकता। गाँधी जी के शब्दों में– ''उस जीव को नष्ट करने का हमें कोई अधिकार नहीं, जिसके बनाने की शक्ति हममें न हो।''

गाँधी जी पशु पक्षियों को मारकर खाने के विरोधी थे। वे शुद्ध शाकाहारी थे तथा पेट के लिये जीवों की हत्या के विरोधी थे। मानव को बुद्धि की शक्ति पशुओं की रक्षा के लिये प्राप्त हुई है उन्हें खाने के लिये नहीं, ऐसा उनका मानना था। उनके शब्दों में– ''मनुष्य को पशु पक्षियों पर जो प्रभुत्व प्राप्त हुआ है वह उन्हें मारकर खाने के लिये नहीं बल्कि उनकी रक्षा के लिये है। जिस प्रकार मनुष्य एक दूसरे का उपयोग करते हैं पर एक दूसरे को खाते नहीं उसी प्रकार पशु–पक्षी भी उपयोग के लिये हैं खाने के लिये नहीं।''

गाँधी जी प्राणिमात्र से प्रेम करने से विश्वास करते थे। पशुपक्षियों एवं वन्य जन्तुओं के प्रति अमानवीय व्यवहार देखकर उनकी आत्मा कराह उठती थी। वन्य जन्तुओं को भी सुख एवं पीड़ा की अनुभूति होती है। हमारे द्वारा कष्ट प्रदान किये जाने पर वे प्रतिरोध भी करते हैं जिसे हम उनके व्यवहार द्वारा अनुभव कर सकते हैं। वे हमसे अपनी सुरक्षा की अपेक्षा करते हैं। हमारे निर्दयी व्यवहार से अब वे पीड़ित हो रहे हैं। यदि हम उनकी अभिव्यक्ति एवं भाषा को समझ सकें तो हम इसका अनुभव कर सकते हैं। इस सम्बन्ध में स्वयं गाँधी जी का कहना है– ''यदि पशुओं की बोली समझी जाने योग्य होती तो वे मनुष्य के विरुद्ध ऐसी बात कहते जिससे मानव जाति विचलित हो जाती।''

यह अत्यन्त दुःखद स्थिति है कि पशु बलि के समर्थन में कहीं–कहीं पर धार्मिक तर्क दिया जाता है। पशु बलि हिंसा है तथा हिंसा सर्वथा त्याज्य है। हिंसा के माध्यम से ईश्वर को प्रसन्न करने का प्रयास निरर्थक है। पशुबलि को धार्मिक कृत्य मानना अपराध है तथा इसका विरोध किया जाना चाहिये। स्वयं गाँधी जी के शब्दों में– ''मुझे आश्चर्य होता है कि किसी की बलि देना धार्मिक कार्य कहा जा सकता है। पशु बलि हिंसा है और हिंसा से ईश्वर कभी प्रसन्न नहीं हो सकता। मेरा यह दृढ़ मत है।''

4. **निष्कर्ष–** इस प्रकार यद्यपि श्रीकृष्ण और गाँधी जी के समय में पर्यावरण प्रदूषण की समस्या नहीं थी, फिर भी दोनों मनीषियों द्वारा प्रकृति प्रेम, पर्यावरण सुरक्षा एवं वन्यजीवों के हित को अत्यधिक महत्त्व दिया गया, जो वर्तमान में समय की आवश्यक माँग है।

संदर्भ

1. महर्षि वेदव्यास(2005) श्रीमद्भागवत महापुराण, गीता प्रेस, गोरखपुर, उ0प्र0।